NEERAJ®

M.H.I. - 105

भारतीय अर्थव्यवस्था का इतिहास-I

(आरंभिक काल से लगभग 1700 सी.ई. तक)

(History of Indian Economy-I
[From the Earliest Time to C.E. 1700])

Chapter Wise Reference Book
Including Many Solved Sample Papers

Based on

I.G.N.O.U.

& Various Central, State & Other Open Universities

By: *Ved Prakash Sharma*

NEERAJ PUBLICATIONS
(Publishers of Educational Books)

Mob.: 8510009872, 8510009878 E-mail: info@neerajbooks.com
Website: www.neerajbooks.com

MRP ₹ 320/-

Content

भारतीय अर्थव्यवस्था का इतिहास-I

(आरंभिक काल से लगभग 1700 सी.ई. तक)

(History of Indian Economy-I [From the Earliest Time to C.E. 1700])

Question Paper—June-2024 (Solved) 1-2

Sample Question Paper—1 (Solved) 1

Sample Question Paper—2 (Solved) 1

Sample Question Paper—3 (Solved) 1

Sample Question Paper—4 (Solved) 1

S.No.	Chapterwise Reference Book	Page

1.	प्रारम्भिक भारत की अर्थव्यवस्था का इतिहासलेखन (Economic Historiography of Early India)	1
2.	मध्यकालीन अर्थव्यवस्था का इतिहासलेखन (Historiography of the Medieval Economy)	6
3.	पर्यावरण क्षेत्र और भारत का आर्थिक इतिहास (Environmental Zones and Indian Economic History)	13
4.	कृषि उद्‌भव, पशुपालन और शिल्प उत्पादन से नगरीकरण तक (हड़प्पा सभ्यता) (Origins of Agriculture, Animal Domestication, Craft Production to Urbanization [Case of the Harappan Civilization])	20
5.	उपमहाद्वीपीय कृषक और पशुपालक समुदाय : प्रारंभ से प्रथम सहस्राब्दी बी.सी.ई. के मध्य का पुरातात्विक और भौगोलिक अध्ययन (Archaeology and Geography of Agricultural and Pastoral Communities of the Subcontinent to the Middle of the First Millennium BC)	27
6.	कुछ प्रारंभिक राज्यों की अर्थव्यवस्थाओं की तुलनात्मक संरचना : मौर्य एवं कुषाण (Comparative Structures of Economies in Some Early States: Maurya and Kushana)	34
7.	कुछ प्रारंभिक राज्यों की अर्थव्यवस्थाओं की तुलनात्मक संरचना : सातवाहन एवं गुप्त (Comparative Structures of Economies in Some Early States: Satavahana and Gupta)	41
8.	व्यापार का स्वरूप, शहरीकरण और आपसी संबंध : उत्तर भारत (C. 600 बी.सी.ई.-300 सी.ई.) (Patterns of Trade, Urbanization and Linkages: North India [C. 600 BC-300 AD])	47
9.	व्यापार का स्वरूप, शहरीकरण और आपसी संबंध : उत्तर भारत (C. 600 बी.सी.ई.-300 सी.ई.) (Patterns of Trade, Urbanization and Linkages: North India [C. 600 BC-300 AD])	52

S.No.	Chapterwise Reference Book	Page
10.	भारतीय इतिहास में सामंतवाद : विभिन्न दृष्टिकोण (The Indian Feudalism Debate)	59
11.	कृषि एवं शिल्प उत्पादन का संगठन : उत्तर भारत, C. 550–1300 सी.ई. (Organization of Agricultural and Craft Production: North India, C. 550-1300 AD)	63
12.	प्रारंभिक मध्यकाल में कृषक समाज की क्षेत्रीय रूपरेखा एवं स्तरीकरण का स्वरूप : उत्तर भारत, C. 550–1300 सी.ई. (Nature of Stratification and Regional Profiles of Agrarian Society in Early Medieval North India, C. 550 - 1300 AD)	69
13.	कृषि एवं शिल्प उत्पादन का संगठन, कृषक समाज की क्षेत्रीय रूपरेखा एवं स्तरीकरण का स्वरूप : दक्षिण भारत, C. 300–1300 सी.ई. (Organization of Agricultural and Crafts Production, Regional Profiles of Agrarian Society, Nature of Stratification: South India, C. 300-1300 AD)	74
14.	विनिमय-तंत्र, श्रेणियाँ, व्यापारी संगठन, व्यापार की वस्तुएँ तथा व्यावसायिक कर, शहरीकरण : उत्तर भारत, C. 300–1300 सी.ई. (Exchange Network, Guild, Merchant Organisation, Trade Items and Trading Tax, Urbanisation: North India, C. 300-1300 AD)	80
15.	विनिमय-तंत्र, श्रेणियाँ एवं व्यापारी संगठन, व्यापार की वस्तुएँ तथा व्यावसायिक कर, शहरीकरण : दक्षिण भारत (Exchange Network, Guild, Merchant Organisation, Trade Items and Trading Tax, Urbanisation: South India)	85
16.	कृषि उत्पादन (Agricultural Production)	91
17.	कृषि संबंध : उत्तर भारत (Agrarian Relations: North India)	99
18.	कृषि संबंध : दक्कन तथा दक्षिण भारत (Agrarian Relations: Deccan and South India)	107
19.	गैर-कृषि उत्पादन तथा शिल्प उत्पादन का संगठन (Non-Agricultural Production and Organisation of Craft Production)	114
20.	राजस्व-प्रणाली : उत्तर भारत (Fiscal System: North India)	121
21.	राजस्व प्रणाली : दक्कन तथा दक्षिण भारत (Fiscal System: Deccan and South India)	129
22.	आन्तरिक और समुद्री व्यापार (Inland and Maritime Trade)	136
23.	व्यावसायिक गतिविधियाँ और मुद्रा व्यवस्था (Business Practices and Monetary History)	141
24.	तकनीकी और अर्थव्यवस्था (Technology and Economy)	149
25.	परिवहन और संचार (Transport and Communication)	155
26.	मध्यकालीन भारत में शहरी केन्द्र (Urban Centres in Medieval India)	160
27.	महिलाएँ तथा श्रम : प्रारंभ से C. 1300 सी.ई. तक (Women and Work upto C. 1300 CE)	166
28.	महिलाएँ तथा श्रम : C. 1300–1700 (Women and Work: C. 1300-1700)	172

■■

Sample Preview of the Solved Sample Question Papers

Published by:

NEERAJ PUBLICATIONS

www.neerajbooks.com

QUESTION PAPER

June – 2024

(Solved)

भारतीय अर्थव्यवस्था का इतिहास-I
(आरंभिक काल से लगभग 1700 सी.ई. तक)

M.H.I.-105

(History of Indian Economy-I [From the Earliest Time to C.E. 1700])

समय : 3 घण्टे] *[अधिकतम अंक : 100*

नोट : *किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक भाग से कम-से-कम दो प्रश्न अवश्य कीजिए। सभी प्रश्नों के अंक* ***समान*** *हैं।*

भाग-I

प्रश्न 1. उन कारकों की चर्चा करें जिन्होंने भारतीय उपमहाद्वीप के कृषि पर्यावरण को निर्धारित किया।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-3, पृष्ठ-16, प्रश्न 3

प्रश्न 2. हड़प्पा सभ्यता पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखें।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-4, पृष्ठ-21, 'हड़प्पा सभ्यता'

प्रश्न 3. प्रारंभिक मध्ययुगीन भारत में शहरी क्षय पर बहस की आलोचनात्मक चर्चा करें।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-14, पृष्ठ-83, प्रश्न 3

प्रश्न 4. दक्षिण भारत में शहरीकरण के विकास में व्यापारी संघों की क्या भूमिका थी?

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-15, पृष्ठ-89, प्रश्न 5

प्रश्न 5. किन्हीं दो पर संक्षिप्त टिप्पणी करें–

(क) आहार संस्कृति

उत्तर–आहड़ संस्कृति एक ताम्र पुरातात्विक संस्कृति है जो दक्षिण-पूर्व राजस्थान में आहाड़ नदी के तट पर ईसा पूर्व 3000 से ईसा पूर्व 1500 तक फली-फूली। यह सिंधु घाटी सभ्यता के समीपवर्ती और समकालीन है। इसे बनास संस्कृति भी कहते हैं। बनास और बेड़च नदियों के साथ-साथ आहड़ नदी के किनारे स्थित, आहड़-बनास लोग अरावली श्रेणी के तांबे के अयस्कों का उपयोग करके कुल्हाड़ियाँ और अन्य कलाकृतियाँ बनाते थे। वे गेहूं और जौ सहित कई फसलों का उत्पादन करते थे।

आहड़, उदयपुर नगर/मेवाड़ क्षेत्र के पूर्व में बहने वाली आयड़/बेड़च नदी के तट पर स्थित है। आहड़ को प्राचीनकाल में ताम्बवती/ताम्रवती के नाम से जाना जाता था। 10वीं व 11वीं शताब्दी में आहड़ को अघाटपुर या अघाटदुर्ग भी कहा जाता था। वर्त्तमान में आहड़ के स्थानीय लोग इसे 'धूलकोट' के नाम से जानते हैं।

आहड़ संस्कृति, तकनीकी रुप से बहुत विकसित थी। खुदाई से पता चलता है कि आहड़ संस्कृति के इस दौर में खेती यहां की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार हुआ करती थी। यहां तांबे के औजार, तरह तरह के बर्तन और सार्वजनिक भवनों के अवशेष मिले हैं जिससे लगता है कि यहां की संस्कृति बहुत समृद्ध रही होगी। वर्षा के प्राचुर्य तथा आहङ घाटी की उपज ने संभवत: भीलो को यहां आकर बसने के लिए प्रेरित किया। यहां के मकान पत्थरों से बने थे जिनमे सामने से चिनाई की जाती थी। कमरे विशेष रूप से बड़े होते थे जिन्हे बांसो या केलू से ढका जाता था। कमरो में बांस की परधी बनाकर छोटे कमरों में परिणत किया जाता था।

आहड़ में पुरातत्वविदों को व्यवसाय के दो दौर मिले। पहला दौर अर्ध-ऐतिहासिक है जिसमें लोग तांबे का प्रयोग करते थे। इसे आहड़ अविध प्रथम दौर भी कहा जाता है जो 2580 ई.पू. और 1500 ई.पू. के बीच था। दूसरा ऐतिहासिक दौर है जिसे आहड़ अवधिक द्वितीय कहते हैं और जिसमें लोग धातु का प्रयोग करते थे। ये अवधि 1000 ई.पू. के बाद की है। यहां खुदाई में धातु की कलाकृतियां, काली पॉलिश की हुई वस्तुएं, कुषाण तथा अन्य साम्राज्यों के समय की कलाकृतियां, ब्राह्मी लिपि से अंकित तीन मोहरें और सिक्के मिले थे।

इनके अलावा खुदाई में धान की खेती, पालतू मवेशी, बहुत कम संख्या में पालतू भेड़, बकरी, बैल, सूअर और कुत्तों की अस्थियां भी मिली थी। इसके अलावा जंगली जानवरों की भी अस्थियां मिलीं जिनका शिकार किया गया होगा। सपाट कुल्हाड़ियां, अंगूठियां, चूड़ियां, तार और ट्यूब आदि जैसी तांबे की कलाकृतियां भी मिली थीं। इसके अलावा एक गढ्डा भी मिला जिसमें तांबे की तलछट और राख थी। इससे पता चलता है कि यहां तांबे को पिघलाने का काम होता होगा। आहड़ में जो अन्य वस्तुएँ मिली हैं उनमें टेराकोटा की कलाकृतियां जैसे मनका, चूड़ियां, कान की बालियां, जानवरों की छोटी मूर्तियां, कम कीमती मोती के मनके जिनमें एक राजावर्त नग है, पत्थर, शंख और अस्थियों की वस्तुएं शामिल हैं।

बर्तनों में विविधता आहड़ की वस्तु संस्कृति की विशेषता है। यहां बर्तनों की कम से कम आठ किस्में मिली हैं। काले और लाल रंग के बर्तन आहड़ संस्कृति की विशिष्टता है। इस पर आर.सी.

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

अग्रवाल का ध्यान गया था। बर्तनों की अन्य किस्मों में काले और लाल रंग का बर्तन जिस पर सफेद रंग की पॉलिश है, भूरा बर्तन, चमड़े के बर्तन आदि शामिल हैं।

(ख) कुषाणों के अधीन व्यापार

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-6, पृष्ठ-39, 'व्यापार, व्यापारी और मुद्रीकरण'

(ग) इंडो-रोमन व्यापार

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-9, पृष्ठ-56, प्रश्न 4

(घ) कारीगर संघ

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-11, पृष्ठ-64, 'शिल्प उत्पादन का संगठन'

भाग-II

प्रश्न 6. मुगलों की भू-राजस्व प्रणाली का संक्षेप में परीक्षण करें।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-21, पृष्ठ-132, प्रश्न 3

पश्न 7. बलुतेदार कौन थे? मध्ययुगीन दक्कन के कृषि समाज में उनकी भूमिका और कार्यों पर चर्चा करें।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-18, पृष्ठ-110, प्रश्न 3

प्रश्न 8. मध्यकाल में सिंचाई के कृत्रिम साधन किस हद तक उत्पादन प्रक्रिया को प्रेरित करते हैं? सिंचाई के लिए पानी उठाने के लिए उपयोग की जाने वाली विभिन्न तकनीकों के आलोक में परीक्षण करें।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-24, पृष्ठ-151, *(ii)* सिंचाई तकनीकी', 'रहट' तथा प्रश्न-2, 'रहट'

प्रश्न 9. मध्यकाल में उत्पादन प्रक्रिया में महिलाओं की क्या भूमिका थी?

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-28, पृष्ठ-174, प्रश्न 2

प्रश्न 10. किन्हीं दो पर संक्षिप्त टिप्पणी करें–

(क) ख्वंद काश्त किसान

उत्तर–खुदकाश्त किसानों को फारसी स्रोतों में 'धानी' तथा संस्कृत में स्थानिका कहा गया है, जिसका अर्थ स्थानीय कृषक था। महाराष्ट्र में इन्हें थलवहिक और मिरासी कहा जाता था। राजस्थान में इन्हें गवेती और घरुहल कहा जाता था।

खुद-काश्त किसान को मुगल सरकारी दस्तावेजों में मालिक-ए-जमीन अर्थात् भूमि का स्वामी भी कहा गया है। वह मुगल साम्राज्य के विभिन्न भागों में विभिन्न नामों से जाना जाता था। उदाहरणार्थ, राजस्थान में उसे गारुहाला या गावेति तथा महाराष्ट्र में मिरासी या थलवाहिक कहते थे। खुद-काश्त किसान वे खेतिहर कृषक थे, जो उसी गाँव की भूमि में खेती-बाड़ी करते थे, जिसके वे निवासी थे। किसानों का यह वर्ग वास्तव में अपने द्वारा नियंत्रित भू-क्षेत्र का स्वामी था, उसे अपनी भूमि पर स्थायी अधिकार प्राप्त थे तथा जमींदार का दर्जा हासिल था। खुद-काश्त किसान को अपनी संपत्ति बेचने का अधिकार था तथा पुरुषों में वंशगत उत्तराधिकार की प्रथा को मान्यता प्राप्त थी। भूमि पर स्वामित्व अधिकार के बदलने पर नया पट्टा लिखा जाता था। पट्टा नए स्वामी पर भू-राजस्व अदा करने की जिम्मेदारी डालता था, जिसके आश्वासन में उसे मुचलका जमा करना पड़ता था तथा एक जामिन भी देना पड़ता था। खुद-काश्त किसान अपनी खेती-बाड़ी में श्रमिकों की सेवाओं का प्रयोग करते थे। उनमें महंगे और अधिक पैदावार देने वाले साधन जुटाने की क्षमता थी तथा वे अच्छी नस्ल के पशुओं एवं अधिक उपजाऊ भूमि के स्वामी थे। वे प्रायः बटाई पर खेती करते थे। यदि बीज आदि का प्रबंध भू-स्वामी किसान द्वारा किया जाता था, तो कृषिगत श्रमिक उपज का एक-तिहाई भाग पाता था। यदि बीज आदि की व्यवस्था श्रमिक द्वारा की जाती थी, तो वह उपज का दो-तिहाई भाग प्राप्त करता था तथा भू-स्वामी किसान एक-तिहाई भाग का मालिक था।

(ख) अलाउद्दीन खिलजी के बाजार नियंत्रण

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-20, पृष्ठ-125, प्रश्न 4

(ग) मध्ययुगीन पुल

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-25, पृष्ठ-158, प्रश्न 4 '(क) मध्यकालीन पुल'

(घ) कपड़ा प्रौद्योगिकी

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-24, पृष्ठ-149, 'परिचय', 'वस्त्र तकनीकी'

■■

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

Sample Preview of The Chapter

Published by:

NEERAJ PUBLICATIONS

www.neerajbooks.com

भारतीय अर्थव्यवस्था का इतिहास
(History of Indian Economy)

प्रारम्भिक भारत की अर्थव्यवस्था का इतिहासलेखन
(Economic Historiography of Early India)

1

परिचय

प्राचीन भारत की अर्थव्यवस्था को जानने के लिए जो सामग्री या पुस्तकें हमें उपलब्ध हैं, उनके मुख्य विषय भूमि पर अधिकार, गाँव के जीवन से लेकर शहरीकरण तक, शिल्प, मुद्रा आदि ही प्रमुख रहे, लेकिन यही पर्याप्त नहीं था, लोगों की अर्थव्यवस्था के बारे में जानने के लिए जब अधिक जिज्ञासा बढ़ी और इसको बढ़ावा दिया एक नये लेखन ने, जिसमें अब राजनैतिक या राजवंशों के इतिहास से हटकर भौतिक संस्कृति और आर्थिक जीवन पर जोर दिया गया। इस दिशा में 1950 एवं 1960 के दशकों में डी.डी. कौशांबी और आर.एस. शर्मा का लेखन-कार्य विशेष रूप से उल्लेखनीय कहा जा सकता है। प्राचीन भारत के इतिहास को मूलत: दो चरणों में विभाजित किया जा सकता है–पूर्व ऐतिहासिक काल, जो गुप्त काल तक फैला हुआ है। दूसरा, पूर्व मध्यकाल, जिसमें छ: से सात शताब्दियों के इतिहास को शामिल किया जाता है।

अध्याय का विहंगावलोकन

विचार एवं अर्थव्यवस्था

प्राचीन भारतीय अर्थव्यवस्था को जानने के लिए हमारे पास जो स्रोत हैं, उनके आधार पर प्राचीन भारतीय कृषि के बारे में जानने के लिए हम संस्कृत व पाली साहित्य से भी जानकारी प्राप्त करते हैं, जो अपने आप में अति महत्त्वपूर्ण हैं व प्राचीन कृषि को जानने व उसके लिए प्रयुक्त प्रचलित शब्दों को बताते हैं। ईसा पूर्व पहली शताब्दी में संस्कृत व पाली साहित्य में जौ, धान, तिल, गन्ना, केला, दाल, सरसों, गेहूँ, आम आदि फसलों का उल्लेख पाते हैं। सालि धान की एक प्रजाति थी। पौधों को लगाने को रोपण कहते हैं, जो आज भी प्रचलित शब्द है। तैयार कृषि भूमि को केदार कहा जाता था। बौद्ध ग्रन्थ 'सुत्तनिपात' में उल्लिखित शब्द अन्नदा, वन्नदा, सुखदा क्रमश: अन्नदाता, सौंदर्यदाता, सुखदाता को दर्शाते हैं और ये शब्द पशुओं के लिए प्रयुक्त हुए हैं।

प्राचीन भारतीय आर्थिक इतिहासलेखन में अर्थशास्त्र में महत्त्वपूर्ण सामग्री उपलब्ध है, जिसमें कृषि को राज्य के राजस्व का एक महत्त्वपूर्ण आधार माना गया है और शूद्रों को कृषि करने की इजाजत दी गयी है। गैर-कृषि उत्पादों–उत्खनन, व्यापार आदि पर राज्य का नियंत्रण था, जिससे राज्य की आय में बढ़ोत्तरी होती थी। मौर्यकालीन ग्रन्थों में शिल्पकारों व व्यापारिक संगठनों की श्रेणियों व अंतरक्षेत्रीय सामुद्रिक व्यापार का उल्लेख मिलता है।

बुद्ध काल व उसके बाद का समय कृषकों एवं श्रमिकों, व्यापारियों की महत्ता व उनकी आवश्यकता को दर्शाता है, क्योंकि इस समय कृषि व व्यापार का अधिक विस्तार होने लगा था, जिसका कारण था–लोहे की खोज। लोहे की खोज ने कृषि व व्यापार में बहुत योगदान दिया। भारत के आर्थिक इतिहासलेखन में गुप्त काल के भूमि अनुदानों से सम्बन्धित शिलालेख भी हैं, इनसे हमें महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

सन् 1950 के दशक से पूर्व इतिहासलेखन की प्रवृत्तियाँ

बीसवीं शताब्दी के मध्य तक प्राचीन भारतीय आर्थिक इतिहासलेखन मुख्यत: साहित्यिक कृतियों पर आधारित था। इनमें शिलालेखों के संदर्भ भी दिए गए, परन्तु इनका एक दोष यह था कि इनमें समय और स्थान की सीमाओं का ध्यान नहीं रखा जाता था, जिसके कारण उस समय में या उस समय की अर्थव्यवस्था में हो रहे परिवर्तनों का पता हम सही-सही नहीं लगा सकते। इस प्रकार की कृतियों में हम यू.एन. घोषाल की 'एग्रेरियन सिस्टम ऑफ नॉर्दन इण्डिया' एवं *ए.एन. बोस* की कृति 'सोशल एण्ड रूरल इकॉनामी ऑफ नॉर्दन इण्डिया' (बी.सी. 600 से 200 ए.डी.) की चर्चा कर सकते हैं।

1950 के दशक के मध्य से आरंभिक भारत के परिप्रेक्ष्य में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। अब इतिहासलेखन का केंद्र-बिन्दु आर्थिक हो गया। अब इतिहास लेखन राजवंशों की लड़ाइयों से निकलकर सामाजिक-आर्थिक विकास के विभिन्न चरणों को देखता हुआ आगे बढ़ने लगा। अब लोगों की जिज्ञासा भी आर्थिक इतिहास में बढ़ने लगी; जैसे–लोहे की खोज का क्या प्रभाव हुआ? क्या वैदिक काल में लोहे की उपलब्धता थी? हड़प्पा सभ्यता में क्या दो फसलों को एक साथ बोया जाता था?–जैसे सवालों के समाधान खोजने की कोशिश की गई।

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

इस समय के इतिहास लेखन में राजा और राजवंशों के इतिहास से अलग जनसाधारण को महत्त्व दिया जाने लगा। उस समय के जनसाधारण के जीवन की सामाजिक-आर्थिक गतिविधियाँ क्या थीं? लोग अपना जीवन कैसे बिताते थे? उस समय व्यापार के लिए क्या साधन थे? लोग अंतर्क्षेत्रीय व्यापार करते थे या देश के बाहर भी व्यापार था? आदि बातों पर ज्यादा जोर दिया जाने लगा। मौर्य काल में व्यापार की विभिन्न गतिविधियों का प्रकाश में आना मौर्य काल के व्यापार और आर्थिक जीवन की उन्नति को दर्शाता है।

नव-इतिहासलेखन

1960 एवं 1970 का दशक नव-इतिहासलेखन का समय कहलाता है। जिस प्रकार 1950 के दशक से पूर्व के इतिहासलेखन में कुछ परिवर्तन हुए थे, स्वाभाविक है कि इन दशकों में भी परिवर्तन अवश्य हुए होंगे और वे परिवर्तन थे–तकनीकी और आर्थिक इतिहास पर अधिक बल देना। पूर्व-ऐतिहासिक काल का समाज कई स्तरों में विभाजित था। आरंभिक मध्यकाल, जिसकी प्रमुख विशेषता उसका सामंती होना था और इस सामंतवादी रूप में सामुद्रिक व्यापार तथा नगरों के पतन, मुद्रा में कमी सत्ता का विकेन्द्रीकरण, शिल्पों का स्थानीयकरण, कृषकों की गतिहीनता, सीमित आर्थिक रूप में देखा जाता है।

पूर्व-मध्यकाल के इतिहास में हमें परिवर्तन के कुछ चिह्न अवश्य दिखाई देते हैं, जैसे–कृषि कार्य का विस्तार, जनजातियों का कृषक बनना, छोटे-छोटे स्थानीय राज्यों का उदय, राज्य-केन्द्रित समाज (State Society) का विस्तार। समय के साथ क्षेत्रीय विविधता भी पूर्व-मध्यकालीन इतिहास में दिखाई देती है। ग्राम पल्लि, घोष (गड़रियों का गाँव) आदि कई प्रकार की बस्तियाँ पायी जाती हैं। इस समय के गाँवों में तालाब, मन्दिर श्मशान आदि का अभाव दिखाई देता है। समय के साथ गाँवों की बस्तियों में परिवर्तन भी दिखाई देता है। गाँव राजाओं के लिए राजस्व के स्रोत होते थे, क्योंकि वे कई रूपों में काम करते थे, जैसे–विनिमय केन्द्र जिनको हाट कहा जाता था, वाणिज्य केन्द्र जिनको उत्तर भारत में मंडपिका और दक्षिणी भारत में पेंठ कहते थे और राज्य इनसे अच्छी-खासी राजस्व वसूली करते थे। कई व्यापारिक श्रेणियाँ थीं; जैसे–श्रेष्ठि (सम्पन्न व्यापारी), बंजारा (फेरी वाले), सार्थवाह (कारवाँ व्यापारी)।

हाल के शोध

पत्थर के औजार एवं मिट्टी के बर्तनों, संसाधनों के उपयोग एवं आबादी के इतिहास, पूर्व मध्यकालीन दक्षिणी भारतीय शिलालेखों का उपयोग करके प्राचीन भारत के आर्थिक इतिहास पर हुए शोधों ने एक बेहतर इतिहास लेखन में और हमारी समझ बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण कार्य किया है, लेकिन इन सबके बावजूद भी ऐतिहासिक स्रोतों की प्रवृत्तियों को देखते हुए किसी प्रकार का ठोस निर्धारण करना कठिन है, क्योंकि इनमें अधिकतर अनुमान ही लगाये जा सकते हैं, जो स्रोतों की अस्पष्टता के कारण हैं।

प्राचीन भारतीय इतिहास में सहअस्तित्व के साक्ष्य तकनीकी और आर्थिक विकास के विभिन्न समुदायों पर आधारित हैं। इसमें हम नवपाषाणयुगीन पशुपालक और मध्यपाषाणयुगीन शिकार संग्राहक वर्ग व हड़प्पायुगीन कृषक एवं शिल्पकारों के सहअस्तित्व के साक्ष्य देख सकते हैं। हड़प्पा में शिल्पकारों का बड़ा महत्त्व था और वहां मनके बनाने का उद्योग बड़ा विकसित था। शिल्पकारों का जीवन स्तर भी अच्छा था। वहां कृषकों का भी अपना महत्त्व था और दोनों का सहअस्तित्व भी था। मौर्य काल की प्रगति गंगा घाटी एवं उससे सटे क्षेत्रों तक सीमित थी। मौर्योत्तर कालीन दक्षिणी भारत में आंध्र क्षेत्र व मध्य भाग (तेलंगाना) में हमें आंध्र क्षेत्र कृषि से सम्पन्न दिखाई देता है, तो तेलंगाना शिल्प व्यापार से समृद्ध दिखाई देता है। यहां लोहा पिघलाने की भट्टियाँ इस बात का सबूत हैं कि लोहे को गलाकर उपकरण तैयार किए जाते थे।

पुरातात्त्विक शोधों के आधार पर काले एवं लाल मृद्भांडों के प्रयोगकर्त्ता व गेरूए रंग के मृदभांडों के प्रयोगकर्त्ता के बीच सम्पर्क और आपसी लेन-देन था। इतिहासकार कृषि की उत्पत्ति और कृषि समुदाय के उद्भव को लौह युग से पूर्व का मानते हैं। इसके कारण वे लोहे की भूमिका पर भी प्रश्नचिह्न लगाते रहे कि जब कृषि की उत्पत्ति और समुदाय का अस्तित्व पहले से था, तो फिर लोहे की क्या विशेष भूमिका रही।

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1. प्राचीन भारतीय आर्थिक इतिहास पर समकालीन विचारों की विवेचना करें।

उत्तर–भारत का आर्थिक विकास सिंधु घाटी सभ्यता से आरम्भ माना जाता है। सिंधु घाटी सभ्यता की अर्थव्यवस्था मुख्यत: व्यापार पर आधारित प्रतीत होती है, जो यातायात में प्रगति के आधार पर समझी जा सकती है। लगभग 600 ई.पू. महाजनपदों में विशेष रूप से चिह्नित सिक्कों को ढालना आरम्भ कर दिया था। इस समय को गहन व्यापारिक गतिविधि एवं नगरीय विकास के रूप में चिह्नित किया जाता है। 300 ई.पू. से मौर्य काल ने भारतीय उपमहाद्वीप का एकीकरण किया। राजनीतिक एकीकरण और सैन्य सुरक्षा ने कृषि उत्पादकता में वृद्धि के साथ, व्यापार एवं वाणिज्य से सामान्य आर्थिक प्रणाली को बढ़ावा मिला।

अगले 1500 वर्षों में भारत में राष्ट्रकूट, होयसल और पश्चिमी गंग जैसे प्रतिष्ठित सभ्यताओं का विकास हुआ। इस अवधि के दौरान भारत को प्राचीन एवं 17वीं शताब्दी तक के मध्ययुगीन विश्व की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में आंकलित किया जाता है। इसमें विश्व की कुल सम्पत्ति का एक-तिहाई से एक चौथाई भाग मराठा साम्राज्य के पास था, इसमें यूरोपीय उपनिवेशवाद के दौरान तेजी से गिरावट आयी।

यद्यपि प्राचीन भारत में महत्त्वपूर्ण नगरीय जनसंख्या पायी जाती है, लेकिन भारत की अधिकत्तर जनसंख्या गाँवों में निवास करती थी, जिसकी अर्थव्यवस्था विस्तृत रूप से पृथक् और आत्मनिर्भर रही है। आबादी का मुख्य व्यवसाय कृषि था और कपड़ा, खाद्य प्रसंस्करण तथा शिल्प जैसे हाथ आधारित उद्योगों के लिए कच्चा माल उपलब्ध कराने के अलावा खाद्य आवश्यकताएँ भी कृषि से

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

पूर्ण होती थीं। कृषकों के अलावा अन्य वर्गों के लोग नाई, बढ़ई, चिकित्सक (आयुर्वेद चिकित्सक अथवा वैद्य), सुनार, बुनकर आदि कार्य करते थे।

प्राचीन भारतीय आर्थिक इतिहास पर समकालीन विचारों की विवेचना उस समय के ग्रन्थों में उपलब्ध जानकारी के आधार पर की जा सकती है। कई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हमें उस समय के आर्थिक इतिहास से अवगत कराते हैं, जिसमें संस्कृत व पाली साहित्य का योगदान महत्त्वपूर्ण रहा है। ये ग्रंथ ईसा पूर्व पहली शताब्दी के मध्य की फसलों के बारे में हमें जानकारी देते हैं। जैसे–इन ग्रन्थों में जौ, गेहूँ, धान, तिल, सरसों, दाल, गन्ना, केला आदि का उल्लेख मिलता है। इन ग्रन्थों से हम उस समय की फसलों के लिए प्रचलित शब्दों को भी जान पाते हैं, जैसे–सालि उस समय धान की एक प्रजाति थी। कृषि हेतु तैयार भूमि को केदार कहा गया है। भूमि और कृषि में लोगों का लगाव था, जो इस बात से स्पष्ट होता है कि भूमि का वर्गीकरण किया गया था। उसे ऊसर, खेत, गोचर आदि श्रेणियों में बाँटा गया था। ऋग्वैदिक काल में पशुपालन का महत्त्व रहा है, तो बुद्ध काल में आर्थिक परिस्थितियां बदलीं और भूमि का कृषि के रूप में बहुत महत्त्व दिखाई देता है।

कौटिल्य कृत अर्थशास्त्र भी आर्थिक इतिहास के लेखन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इससे पता चलता है कि गाँव की आबादी एवं कृषि कर्म राज्य के राजस्व का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत थे। शूद्रों को उनकी श्रम श्रेष्ठता के कारण कृषि भूमि को आबाद करने के कार्य में लगाया जाने लगा। राजस्व के अन्य स्रोतों के रूप में राज्य गैर-कृषि उत्पादों पर कर लगता था। धातु कर्म एवं व्यापार पर राज्य का नियंत्रण हमें अर्थशास्त्र में देखने को मिलता है। मौर्य काल के बाद तो यह बात स्पष्ट रूप से सामने आयी कि भूमि उसी की है, जो उसे कृषि योग्य बनाता है। यह बात मनुस्मृति और मिलिंदपण्हों में उल्लिखित है। उत्तर मौर्यकालीन ग्रन्थों में नाना प्रकार की श्रेणियों, पेशों एवं श्रमिकों का वर्णन है। मथुरा, साँची एवं अन्य स्थानों से प्राप्त शिलालेख दानकर्त्ताओं के नाम और उनके पेशों की चर्चा करते हैं, जो उनके आर्थिक रूप से सक्षम होने का प्रमाण हैं।

उस समय के ग्रंथ गुप्त काल के व्यापार के ह्रास, नगरों धात्विक मुद्रा के अभाव के बारे में भी जानकारी उपलब्ध कराते हैं। हर्षचरित से हम उस समय के आर्थिक इतिहास के बारे में जान पाते हैं। इस समय के अभिलेख भी आर्थिक इतिहास की महत्त्वपूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं।

प्रश्न 2. प्राचीन भारत के आर्थिक इतिहास पर समकालीन विचार विकास या स्थिरता में से क्या इंगित करते हैं?

उत्तर–प्राचीन भारत के आर्थिक इतिहास पर समकालीन विचार विकास और प्रगति को इंगित करते हैं। उस समय के आर्थिक इतिहास में विकास निरन्तर देखने को मिलता है। व्यापार में वृद्धि, राजस्व के स्रोत बढ़ाने के लिए राज्य के क्रियाकलाप और भूमि को उत्पादन हेतु उपयुक्त बनाने और उस पर कृषि आदि विकास को ही प्रदर्शित करते हैं। भूमि का वर्गीकरण, फसलों की किस्में, सोने, चाँदी, ताँबे और यहां तक कि पोटीन की मुद्राओं का ढाला जाना भी उस समय के आर्थिक इतिहास में विकास का ही द्योतक है। भूमि अनुदान, व्यापारी, श्रेष्ठी आदि उस समय के आर्थिक विकास को प्रदर्शित करते हैं। श्रेष्ठी एक स्थान से दूसरे स्थान पर व्यापार करने जाते थे। श्रेष्ठी के अपने अलग नियम होते थे। राजा उनके काम में दखल नहीं देता था। भूमि अनुदान से कृषि को ज्यादा बढ़ावा मिला। वैदिक काल में पशुपालन का महत्त्व था, तो बुद्ध काल में कृषि को महत्त्व दिया जाने लगा। मौर्य काल में राज्य व्यापार में भी रुचि लेने लगा और कृषि के अतिरिक्त गैर-कृषि उत्पादों पर भी राज्य कर लगाने लगा, जिससे राज्य की आय बढ़ी। ये सब विकास को प्रदर्शित करते हैं।

अत: हम उपर्युक्त विवरण के आधार पर कह सकते हैं कि प्राचीन भारतीय आर्थिक इतिहास विकास को इंगित करता है। निरन्तर विकास में गुप्त व गुप्तोत्तर काल में थोड़ा ठहराव जरूर आया, परन्तु इससे ऐसा नहीं है कि विकास फिर आगे हो ही नहीं पाया या इसके बाद विकास रुक गया। अत: आर्थिक इतिहास विकास को इंगित करता है न कि स्थिरता को।

प्रश्न 3. सन् 1960 के दशक के दौरान इतिहासलेखन के रुझानों का विश्लेषण करें।

उत्तर–1960 के दशक का इतिहास लेखन नव-इतिहास लेखन को प्रदर्शित करता है। यही वह समय था, जब अर्थव्यवस्था को मौद्रिकीकरण के रूप में देखा गया। यह समय नयी दृष्टि से इतिहास लेखन को प्रदर्शित करता है। 1960 के दशक में तकनीकी और आर्थिक परिवर्तन पर बड़ा बल दिया गया। इस समय के इतिहास से पता चलता है कि किस प्रकार राज्य की आय को बढ़ावा देने के लिए भूमि व उत्पादक वर्ग में परिवर्तन हुए।

उत्पादन की जिम्मेदारी प्रमुख करदाता वर्ग वैश्य और शारीरिक श्रम का दायित्व शूद्रों के कन्धों पर डाल दिया गया। आरम्भिक मध्यकाल जिसकी एक प्रमुख विशेषता उसका सामन्ती स्वरूप था, को सामुद्रिक व्यापार, नगरों के पतन, मुद्रा में कमी, वैश्यों व शूद्रों की दशा में परिवर्तन, सीमित आर्थिक इकाइयों के रूप में उल्लिखित किया गया। मध्यकालीन भारत में कुछ क्षेत्रों में कृषि विस्तार की बात तो स्वीकार की जाती है। इतिहास लेखन में एक प्रकार से सर्वव्यापी ह्रास का विचार व्याप्त दिखाई देता है। इस समय के इतिहास लेखन में क्षेत्रीय विविधता और परिवर्तन दिखाई देते हैं। जैसे–कई प्रकार की ग्रामीण बस्तियों का पाया जाना और इन गाँवों की सामाजिक संरचना भी समय के साथ-साथ बदलती रही। ग्रामीण बस्तियों का स्वरूप भी समय के साथ-साथ बदला। गाँव राज्य की आय के प्रमुख साधन के रूप में सामने आए, क्योंकि ये कई प्रकार के स्वरूप को प्रदर्शित करते थे–कभी विनिमय केन्द्र, तो कभी वाणिज्य केन्द्र आदि के रूप में और राज्य इन पर कर लगाता था, जिसके कारण इनकी आय में वृद्धि होती थी।

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

इतिहासकारों ने उस समय की विशेषताओं और कुरीतियों दोनों का ही विश्लेषण किया है। सामाजिक कुरीतियों के तहत नीची जातियों का शोषण किस प्रकार किया जाता था, महिलाओं के साथ किस प्रकार का व्यवहार किया जाता था आदि। 1960 के दशक में ये इतिहासकारों के लिए विश्लेषण के मुद्दे बने। पदानुक्रम पर आधारित विभिन्न वर्गों का समायोजन आदि जैसी कुछ घटनाओं ने इतिहासकारों का ध्यान अपनी ओर आकृषित किया। गाँव के रहन-सहन, मनोरंजन, रीति-रिवाज आदि पर इतिहासकारों ने अपने विचार प्रकट किए। पूर्व-मध्यकालीन भारत में व्यापारियों की कई श्रेणियों; जैसे–वणिक, बंजारा, सार्थवाह, श्रेष्ठि और राजश्रेष्ठी आदि का वर्णन भी इस समय के इतिहास में दृष्टिगोचर होता है। पूर्व-मध्यकालीन भारत में व्यापार एवं शहरी केन्द्रों के पतन को भी नई दृष्टि से देखने का प्रयास किया गया।

अत: हम कह सकते हैं कि 1960 का दशक नव-आर्थिक इतिहास लेखन का काल था, क्योंकि इस समय तकनीकी और आर्थिक इतिहास तो इतिहासकारों के केन्द्र-बिन्दु के रूप में रहे। उन्होंने इससे जुड़े सभी पहलुओं को जानने का प्रयास किया और इन पर लेखन कार्य भी किया।

प्रश्न 4. 1950 के दशक के उत्तरार्द्ध में आर्थिक इतिहास लेखन किस प्रकार 20वीं शताब्दी के आरंभ के इतिहासलेखन से भिन्न है?

उत्तर–1950 के दशक के इतिहास में हम समय व स्थान की सीमा का अभाव पाते हैं, जिसके कारण परिवर्तन की प्रक्रिया को समझना कठिन हो जाता है। आर्थिक जीवन और उससे जुड़ी गतिविधियों के बारे में भी हम स्पष्ट रूप से जानकारी प्राप्त नहीं कर सकते, लेकिन 1950 के मध्य से 20वीं शताब्दी के आरम्भ के इतिहास में समाज एवं राजनीतिक व्यवस्था आर्थिक इतिहास के केन्द्र-बिन्दु हो गए। अब राजवंशों की लड़ाई इतिहासकारों के लिए इतनी महत्त्वपूर्ण नहीं रही, जितना कि सामाजिक-आर्थिक विकास। इस ओर इतिहासकारों ने अपना ध्यान केन्द्रित किया और इस पर बड़ी सजगता से अपने विचार प्रकट किए।

अब इतिहासकारों के नजरिये में एक नया परिवर्तन आया। अब वे सामाजिक-आर्थिक विकास के क्रम की व्याख्या करने लगे। जनसाधारण पर विशेष ध्यान दिया गया। राजवंशों के बारे में अधिक न लिखकर जनसाधारण के जीवन पर ध्यान दिया गया। जनसाधारण की आर्थिक गतिविधियाँ, राज्यों को उनका सहयोग, उनका अपना जीवन इतिहासकारों के लिए नये मुद्दे बने। हालांकि इस क्रम में पहले से स्थापित मुद्दों को ठेस पहुँची। किसी भी प्रकार के परिवर्तन के कारण को राजनीतिक रूप में न देखकर विकास के रूप में देखा जाने लगा।

20वीं शताब्दी के आरम्भ के इतिहास लेखन और 1950 के मध्य के इतिहास लेखन में व्यापक भिन्नता है। 20वीं शताब्दी के आरम्भ में इतिहासकारों ने जनसाधारण की जीवन-शैली, रहन-सहन, खान-पान आदि के सम्बन्ध में जाना व इस पर लिखा, जबकि 1950 के मध्य दशक से पहले राजा व राजवंश ही इतिहास के केन्द्र-बिन्दु हुआ करते थे। 20वीं शताब्दी के आरंभ में लोगों में भी इस इतिहास को जानने की जिज्ञासा बढ़ी और शोधों द्वारा नये-नये प्रश्नों के उत्तर खोजने की ओर ध्यान दिया गया।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि 1950 के दशक के उत्तरार्द्ध में आर्थिक इतिहास लेखन 20वीं शताब्दी के आरम्भ के इतिहास लेखन से न सिर्फ भिन्न था, बल्कि इसमें आमूल-चूल परिवर्तन हुआ और इसने इतिहासकारों को एक नयी दिशा में सोचने के लिए बाध्य किया। इसने जनसाधारण को विशेष महत्त्व का बना दिया गया। आर्थिक इतिहास को भी जनसाधारण से जोड़कर देखा जाने लगा। उसका क्या रूप था; उसने किस प्रकार राज्य और उस समय के समाज को प्रभावित किया–इस इतिहास लेखन की अपनी विशेषता है, जो उसे 1950 के इतिहास लेखन से अलग करता है। इस इतिहास लेखन ने मौर्य काल की व्यापारिक-आर्थिक गतिविधियों को प्रकाशित किया, तो दूसरी ओर गुप्तकाल के अपेक्षित पतन व ठहराव की बात को सामने लाकर गुप्तकाल के स्वर्णिम युग होने की धारणा को धूमिल किया।

प्रश्न 5. प्राचीन भारत के आर्थिक इतिहास लेखन की आधुनिक प्रवृत्तियों का लेखा-जोखा प्रदान कीजिए।

उत्तर–यू.एन. घोषाल की कृति 'एग्रेरियन सिस्टम ऑफ नार्दन इंडिया' एवं ए.एन. बोस की कृति 'सोशल एंड रूरल इकॉनॉमी ऑफ नॉर्दन इडिया (बी.सी. 600 से 200 ए.डी.) अनिवार्यत: साहित्यिक संदर्भों तथा आधुनिक प्रवृत्तियों पर आधारित है। दोनों पुस्तकें सतत् शोधों के बाद सामने आईं। प्राचीन भारत के आर्थिक परिदृश्य को स्पष्ट करने के लिए वैज्ञानिक शोधों का सहारा लिया गया। हालांकि इनमें शिलालेखों के आंकड़ों का भी उपयोग हुआ है। इस प्रकार की अधिकांश कृतियां विभिन्न स्रोतों से ग्रहण किए गए तथ्यपरक विवरणों को प्रस्तुत करती हैं। इस प्रस्तुति में समय और सीमाओं का कोई ध्यान नहीं रखा गया। इसके परिणामस्वरूप संस्था विशेष की पृष्ठभूमि में परिवर्तन की प्रक्रियाओं को समझना कठिन हो गया। आर्थिक गतिविधि की परिकल्पनाओं में आर्थिक जीवन एवं संस्थानों का विश्लेषण एवं उसकी व्याख्या अज्ञात ही बनी रही। संक्षेप में कहें तो पूरे परिप्रेक्ष्य में ही आमूल-चूल परिवर्तन आ गया था। हालांकि इस क्रम में कुछ संजोए हुए प्रतिष्ठित विचारों में उथल-पुथल हुई, जो अवश्यंभावी था।

मौर्य काल के पश्चात् नाना प्रकार की आर्थिक गतिविधियों का प्रकाश में आना तथा गुप्तकाल में आपेक्षिक पतन या ठहराव की बात गुप्तकाल के स्वर्णिम युग होने की धारणा को चोट पहुँचाती है और इस प्रकार राजवंशों के इतिहास से परे, आर्थिक इतिहास पर जनसाधारण वर्ग का प्रभाव दृष्टिगोचर होने लगा। इस इतिहास ने राजा एवं राजाओं की बजाय जनसाधारण को महत्त्व दिया। ऐसा अनिवार्यत: न केवल नए आंकड़ों की उपलब्धियों के कारण हुआ, बल्कि मोटे तौर पर नए परिप्रेक्ष्यों एवं नए प्रश्नों की उत्पत्ति के कारण हुआ। ये प्रश्न प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com